मूल्यांकन के विविध पहलू

❑ सरला मोहनलाल

सरला मोहनलाल ने प्रस्तुत पर्चे में संधान शोध केन्द्र द्वारा आयोजित कार्यशालाओं में हुए विचार-विमर्शों, विभिन्न शोध-पत्रों व किताबों (जैसे माइकल कुइन पैट्न की क्रिएटिव इवेलुएशन, क्रिस्टीन निकोलसन-नैलसन की मल्टीपल इन्टेलिजेन्सिस, डेविड लेजर की मल्टीपल इन्टेलिजेन्स अपरोचिस टू असेसमेन्ट सोलविंग दी असेसमेन्ट कोननड्रम, हॉर्वर्ड गार्डनर की मल्टीपल इन्टेलिजेन्स आदि) की मूल बातों को सिलसिलेवार तरीके से रखने का प्रयास किया है ।

सुधीर के पिता सरकारी डॉक्टर थे और उन्हें एक गांव में नियुक्त किया गया । उस गांव में कोई अच्छा स्कूल नहीं था, अत: सुधीर ने घर पर ही अपनी मां से अक्षर ज्ञान और गणित की शिक्षा प्राप्त की । जब वह छ: वर्ष का हो गया तो उसे पढ़ने के लिए अपने ननिहाल भेजा गया । भरती होने के पहले उसका मूल्यांकन किया गया कि वह किस कक्षा के उपयुक्त है । उसने प्रश्न-पत्र के सात प्रश्नों में से केवल दो के उत्तर दिए और पांच प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास ही नहीं किया। जब उससे पूछा गया कि उसने सभी प्रश्नों के उत्तर क्यों नहीं दिए तो उसने कहा कि मैं घर पर स्लेट पेंसिल से लिखता था और मुझे कागज पेंसिल से लिखना अच्छा नहीं लगा ।

सौभाग्य से यह घटना उस समय की है जब स्कूलों में भर्तियों के लिए इतनी आपाधापी नहीं थी और अध्यापिकाओं के पास भी इतने अधिक बच्चों की भीड़ नहीं होती थी कि वे किसी बच्चे की व्यक्तिगत कठिनाई पर ध्यान न दें । सुधीर की अध्यापिका ने भी उसकी कठिनाई समझी और उसका मौखिक मूल्यांकन करके उसे उपयुक्त कक्षा में भरती कर लिया । सुधीर आज अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त डॉक्टर है ।

●

कुसुम श्रीवास्तव एक मेधावी छात्रा थी । उसने अपनी सभी परीक्षाएं प्रथम श्रेणी में पास की थीं। उसने भारतीय प्रशासनिक सेवा की परीक्षा में बैठने का निर्णय किया । उसी वर्ष से इस परीक्षा के पर्चे कंप्यूटर से जांचने की प्रथा शुरू हुई थी । इसके लिए एक विशेष प्रकार की पेंसिल का उपयोग जरूरी था । कुसुम अपनी पढ़ाई में लिप्त, इस तथ्य से अनजान थी और उसने अपने सब उत्तर फाउन्टेन पेन से लिखे । अत: उसका पर्चा खारिज कर दिया गया और वह अयोग्य घोषित हो गई ।

●

मालती ने मुझे बताया कि अपनी परीक्षा के लिए उसने केवल संभावना के आधार पर दस प्रश्न तैयार किये थे । सौभाग्य से उन्हीं प्रश्नों में से अधिकांश प्रश्न परीक्षा में आ गए और वह बहुत अच्छे नम्बरों से पास हो गयी, जबकि वास्तव में उसने आधा पाठ्यक्रम भी नहीं पढ़ा था ।

●

उक्त उदाहरणों से पता चलता है कि कितने गौण और अमहत्वपूर्ण कारणों से कोई विद्यार्थी परीक्षा में सफल या असफल घोषित हो जाता है । यदि बचपन में उसके ऊपर इस असफलता का ठप्पा लग गया, तो वह उसकी समस्त औपचारिक शिक्षा के दौरान उससे चिपका रहता है, और बहुधा आगे के जीवन में भी उसका अनुसरण करता है। सबसे दुख की बात तो यह है कि स्वयं वह विद्यार्थी भी अपने ऊपर लगे इस लेबिल को स्वीकार कर लेता है और उसी आधार पर अपने को वर्गीकृत करता है । इसकी वैधता पर कभी प्रश्न नहीं उठता ।

वर्तमान व्यवस्था में सभी बच्चों के लिए मूल्यांकन का एक ही मानदंड रखा जाता है । यह इस धारणा पर आधारित है कि सभी बच्चे एक जैसे होते हैं । पहले यह माना जाता था कि सब बच्चे कोरे कागज की तरह हैं, जिन पर जो चाहें वह लिखा जा सकता है । यह भी समझा जाता था कि बच्चे उन खाली बरतनों की तरह हैं जिनमें हम जितना सामान चाहें, ठूंस दें । शायद इन सब धारणाओं ने उस समय जन्म लिया जब औद्यागिक क्रांति हो रही थी । बड़ी-बड़ी फैक्टरियां खुल रही थीं और उन्हीं के प्रतिमानों पर स्कूलों की भी स्थापना की गई। शिक्षा का भी मशीनीकरण कर दिया गया।

प्राचीन समय में धार्मिक गुरू शिक्षा प्रदान करते थे । वे अपने ढंग से प्रत्येक विद्यार्थी की क्षमता को आंक कर उसके सर्वांगीण विकास पर ध्यान देते थे । परंतु उस समय बहुत कम लोगों को शिक्षा उपलब्ध होती थी । अब शिक्षा का सर्वव्यापीकरण

हो जाने से उसका विस्तार बहुत अधिक हो गया है । अत: उसका मानकीकरण किया गया जिसमें सभी बच्चों को एक ही डंडे से हांका जाता है ।

अब नए अनुसंधानों के आधार पर मान्यताएं बदल रही हैं । अब यह पता चल रहा है कि कोई दो विद्यार्थी एक से नहीं होते । प्रत्येक विद्यार्थी बेजोड़ और अनन्य होता है । कोई नियम या मानदंड ऐसा नहीं हो सकता जिसके आधार पर सभी विद्यार्थियों का मूल्यांकन किया जा सके । उनके लिखने-पढ़ने तथा गणित की क्षमता को आंकने का मानकीकरण नहीं हो सकता । सच पूछिए तो आजकल हमारे बच्चों की समस्त रचनात्मक प्रतिभा चौथी कक्षा तक पहुंचते-पहुंचते पूर्णत: कुचल दी जाती है । शिक्षक यही चाहता है कि वह कक्षा में सिखाए, छात्र उसी को लिखें । वे जैसा देखें, वही अपनी ड्राइंग में प्रतिबिम्बित करें । आजकल अधिकांश स्कूलों में तो यहां तक देखा जाता है कि शिक्षक सभी प्रश्नों के उत्तर कक्षा में लिखवा देते हैं और यदि छात्र उसी रूप में, और उसी भाषा में उत्तर लिखता है तो उसे अच्छे अंक दे दिए जाते हैं । यदि उसने कोई भिन्न प्रकार से उत्तर दिया, उसी सामग्री को एक भिन्न भाषा में व्यक्त किया, तो वह गलत मान लिया जाता है । हम बच्चों को स्वयं सोचने के लिए प्रोत्साहित नहीं करते । हम केवल उनमें रटन्त विद्या को बढ़ावा देते हैं ।

आजकल मूल्यांकन का काम केवल विद्यार्थियों की कमजोरियों का पता लगाना है और हम उनका ध्यान केवल उनके दोषों की ओर खींचते हैं । मूल्यांकन का उद्देश्य, उनकी क्षमता का विकास करना होना चाहिए । हम उनकी शक्तियों पर प्रकाश डालें और उनका विकास करने का उन्हें मौका दें क्योंकि नई खोजों ने यह सिद्ध कर दिया है कि किसी भी प्रकार की बौद्धिक क्षमता का किसी भी आयु में विकास किया जा सकता है । हम जितना उस बुद्धि का प्रयोग करेंगे, वह उतनी ही बढ़ेगी ।

एक उदाहरण लेते हैं - यदि यह पूछा जाए कि लकड़ी के घर बनाने की अपेक्षा ईंटों के घर बनाना क्यों बेहतर है ? तो इसका पूर्व निर्धारित उत्तर है कि ईंट अधिक मजबूत होती है, अधिक स्थाई होती है और ईंट के घर अधिक सुरक्षित होते हैं । जो विद्यार्थी इन अपेक्षित उत्तरों को लिख देगा, वह बहुत बुद्धिमान समझा जाएगा । परंतु यदि किसी छात्र ने लिख दिया कि ईंटों का प्रयोग इसलिए बेहतर है क्योंकि लकड़ी का प्रयोग करने का मतलब होगा कि हम पेड़ काटें और पेड़ों के काटने से हमारे जंगलों का विनाश होगा तो उसका उत्तर गलत माना जाएगा क्योंकि वह कक्षा में नहीं लिखवाया गया था । यदि लड़के ने यह लिख दिया कि लकड़ी के घर अधिक सुन्दर लगते हैं जबकि ईंटों के घर भद्दे दिखाई देते हैं, तब तो उसे शून्य ही दिया जाएगा।

सच पूछिए तो रचनात्मकता के क्षेत्र में कोई एक निर्धारित हल नहीं हो सकता । प्रत्येक प्रश्न के, प्रत्येक समस्या के अनेक संभावित उत्तर हो सकते हैं । परंतु हम बच्चों में इस रचनात्मकता को कुचल कर करीब 70% बच्चों की प्रतिभा को अनदेखी कर देते हैं । शिक्षकों के साथ-साथ माता-पिता भी बच्चों को प्रश्न पूछने के लिए हतोत्साहित करते हैं। बच्चों के प्रश्नों का उत्तर देना कोई सरल तो होता नहीं है । एक चार वर्ष के बच्चे ने अपनी मां से पूछा, 'बारह घंटे अधिक होते हैं या बारह मील ?' मां ने उत्तर दिया 'बेवकूफी के सवाल मत पूछा करो।' शायद वह बच्चा जानना चाहता था कि 12 के अंक का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व होता है या नहीं क्योंकि उसने सदा 12 के बाद कोई अन्य वस्तु का उपयोग होते देखा था, जैसे - 12 संतरे, 12 पेंसिलें । परंतु वह तो डपट कर चुप करा दिया गया और बेवकूफ भी घोषित हो गया।

अब अनुसंधानों से यह पता चल रहा है कि बुद्धि मूल्यांकन के जो परीक्षण होते हैं, वे बच्चे की प्रतिभा का वास्तविक मूल्यांकन नहीं करते । अनुभवों से पता चलता है कि जो बच्चे पढ़ने, लिखने और बोलने में प्रवीण होते हैं तथा जो गणित के मूलभूत प्रश्न हल कर सकते हैं, वे स्कूलों में अधिक सफल विद्यार्थी माने जाते हैं। परंतु यह जरूरी नहीं है कि वे आगे चल कर वास्तविक जीवन में भी इतने ही सफल रहें । वास्तविक जीवन में कई अन्य प्रकार की क्षमताओं की आवश्यकता हो सकती है जिनका या तो इन विद्यार्थियों में अभाव होता है, या उन्हें स्कूली परीक्षाओं के लिए अमहत्त्वपूर्ण समझ कर उनका विकास नहीं किया जाता । आइन्सटाइन एक जगत विख्यात वैज्ञानिक है जिसने सापेक्षता का सिद्धांत प्रतिपादित करके भौतिक विज्ञान का रूप ही बदल दिया था । परंतु आपको आश्चर्य होगा कि अपने विद्यार्थी जीवन में वह गणित में फेल कर दिया गया था ।

आजकल मस्तिष्क पर बहुत अनुसंधान किए जा रहे हैं। इससे अनेक आश्चर्यजनक तथ्य सामने आए हैं । अब मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बुद्धि एक वंशानुगत पृथक इकाई नहीं है जिसे बुद्धि परीक्षणों द्वारा मापा जा सके । वास्तव में बुद्धि के अलग-अलग प्रकार के रूप होते हैं जो मस्तिष्क के अलग-अलग केन्द्रों द्वारा संचालित होते हैं। ये सब केन्द्र एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं और एक-

दूसरे पर आधारित भी हैं परंतु आवश्यकता पड़ने पर वे स्वतंत्र रूप में भी कार्य कर सकते हैं। उचित वातावरण और उपयुक्त परिस्थितियां उपलब्ध होने पर इन बहुत बुद्धियों का विकास किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिकों ने आठ प्रकार की बुद्धियों या मस्तिष्क की क्षमताओं को पहचाना है । हो सकता है इनके अतिरिक्त समझने की योग्यता के कोई और रूप भी हों।

ये आठ प्रकार की बुद्धियां हैं –

1. मौखिक - भाषागत बुद्धि ।
2. गणित - तर्क की बुद्धि ।
3. आकार द्वारा समझने की बुद्धि ।
4. संगीतात्मक बुद्धि ।
5. शारीरिक गति, संवेदनशील बुद्धि ।
6. अंर्तव्यक्ति संबंध स्थापित करने की क्षमता ।
7. आत्म-मूल्यांकन की क्षमता ।
8. प्रकृति को समझने की क्षमता ।

हमें यह बात समझ लेनी चाहिए कि ये आठों प्रकार की बुद्धियां प्रत्येक व्यक्ति में पाई जाती है । ये सभी परस्पर संबंधित हैं और एक सामूहिक वाद्य-वृन्द की तरह कार्य करती हैं । परंतु किसी बच्चे में कोई क्षमता अधिक मात्रा में होती है और किसी में कोई। जिस विद्यार्थी को कोई बात शब्दों के माध्यम से समझ में नहीं आती, वह उसे चित्र, आकार, चार्ट आदि द्वारा स्पष्ट हो जाती है। कोई बच्चा गणित की अवधारणाएं नहीं समझ पाता परंतु कला के क्षेत्र में वह शायद अधिक दक्ष हो। प्रत्येक बच्चे के पास कोई न कोई प्रतिभा अवश्य होती है । केवल भाषा और गणित की क्षमता के आधार पर किसी को नालायक घोषित करना उसके प्रति अन्याय होगा और देश अपनी इतनी बड़ी संभावित प्रतिभा से वंचित भी रहेगा ।

इन बहुल बुद्धियों पर आजकल बहुत अनुसंधान हो रहा है और शिक्षक अपने पाठ को इस विधि से पढ़ाते हैं जो सभी प्रकार की क्षमता के बच्चों को समझ में आ सके । इन बुद्धियों पर थोड़ा सा विस्तार से देखें -

1. मौखिक-भाषागत बुद्धि

जिन बच्चों में इसे उर्वर पाया जाता है उन्हें लिखना, पढ़ना, कहानी सुनाना आदि अच्छा लगता है । उनकी याददाश्त बहुत तेज होती है और उन्हें स्थानों, व्यक्तियों तथा महत्त्वपूर्ण तिथियों की स्मृति रहती है। यह बुद्धि जिन व्यवसायों में उपयोगी होती है, वे हैं – लेखक, सार्वजनिक वक्ता, शिक्षक, सेक्रेटरी (सचिव), व्यावसायिक प्रबन्धक, कवि और नाटक अभिनेता ।

2. गणित-तर्क बुद्धि

जिन बच्चों में यह बहुलता से पाई जाती है वे अगमनात्मक और निगमनात्मक तर्क में प्रवीण होते हैं । वे अमूर्त अवधारणाओं को समझ सकते हैं और उनका कुशलता से उपयोग कर सकते हैं। यह बुद्धि वैज्ञानिकों, बैंक के प्रबन्धकों, गणितज्ञों, कंप्यूटर का प्रोग्राम बनाने वाले, वकीलों और लेखाकारों में पाई जाती है ।

3. आकार द्वारा समझने की बुद्धि

ऐसे बच्चे अपने विचारों को चित्र द्वारा व्यक्त करते हैं । इन्हें कोई नई सूचना अच्छी तरह तभी समझ में आती है जब वह दृश्य रूप में उनके सामने रखी जाए - चित्र, या चार्ट या रेखाचित्रों के रूप में । ये चित्रकला में डिजाइन बनाने में, मानचित्र कला में, वास्तुशिल्प में तथा मूर्तिकला में प्रवीण होते हैं ।

4. संगीतात्मक बुद्धि

ऐसे बच्चे ध्वनि, लय और स्वर के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। इन्हें गीतों की धुनें बहुत जल्दी याद हो जाती हैं और वे उन्हें नहीं भूलते । जिनमें यह बुद्धि पाई जाती है वे बड़े होकर संगीतज्ञ, गीत, लेखक, नर्तक, संगीत की धुन बनाने वाले और संगीत के शिक्षक बनते हैं ।

5. शारीरिक गति, संवेदनशील बुद्धि

ये बच्चे अपने शरीर में रूचि रखते हैं और शरीर द्वारा अपनी भावनाओं और विचारों को व्यक्त करते हैं । ये शारीरिक गतिविधियों में, अंगों के समन्वय में, इशारे करने में बहुत कुशल होते हैं । ऐसी बुद्धि वाले बच्चे बड़े होकर अभिनेता, खेलकूद और व्यायाम में भाग लेने वाले, शल्य चिकित्सक, नर्तक, नकल उतारने वाले आदि बनते हैं ।

6. व्यक्तियों के मध्य संबंध स्थापित करने की क्षमता

ये बच्चे दूसरे लोगों से कुशलता से बातचीत कर सकते हैं, उनके उद्देश्यों और अभिप्रायों का पता लगा सकते हैं । ऐसी बुद्धि वाले व्यक्ति सहकारी कार्य बहुत अच्छी तरह कर सकते हैं । उनमें नेतृत्व के गुण होते हैं । वे संगठन के कार्य में बहुत निपुण होते हैं। मध्यस्थता करने में संचार का कार्य करने में तथा दूसरों के साथ समझौते की बातचीत करने में, वे अपनी कुशलता प्रदर्शित करते हैं । ऐसी बुद्धि वाले व्यक्ति आगे चल कर शिक्षक, चिकित्सक, सलाहकार, राजनेता, धार्मिक गुरू, व्यावसायिक प्रबन्धक और विक्रेता बनते हैं ।

7. स्व-मूल्यांकन की क्षमता

जिनमें यह बुद्धि होती है, वे स्वयं अपनी भावनाओं, अपने उद्देश्यों और अभिप्रायों को समझते हैं। उनमें आत्म चिन्तन की बहुत शक्तिशाली प्रवृत्ति होती है। उनमें आत्मविश्वास होता है और वे अकेले रह सकते हैं । इनका सहज बोध बहुत प्रखर होता है। सामान्यत: यह बुद्धि दार्शनिकों, मनोवैज्ञानिकों, धार्मिक नेताओं, और मस्तिष्क पर अनुसंधान करने वालों में बड़ी मात्रा में पाई जाती है।

8. प्रकृति को समझने की क्षमता

कुछ बच्चों में वनस्पति और जीव-जंतुओं को पहचानने की क्षमता होती है। वे प्राकृतिक संसार के नियमों और विशिष्टताओं को अच्छी तरह समझ सकते हैं । उन्हें मानव और प्रकृति की अन्योन्याश्रिता का बोध होता है । इस प्रकार की बुद्धि वनस्पति शास्त्रियों, प्रकृति वैज्ञानिकों और भौतिक वैज्ञानिकों में पाई जाती है।

जैसा पहले कहा जा चुका है, ये आठों प्रकार की बुद्धियां प्रत्येक व्यक्ति में उपस्थित रहती हैं और परस्पर संबंधित रहती हैं । परंतु इनका अनुपात प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न भिन्न होता है । प्रत्येक बच्चे में अलग-अलग प्रकार की प्रतिभा होती है। हमारी कोशिश यह होनी चाहिए कि हम उस प्रतिभा को ढूंढें और उसका विकास करें। प्रत्येक बच्चे के सीखने, समझने, अनुभव करने और प्राप्त सूचना का विश्लेषण करने का तरीका अलग-अलग होता है ।

अत: मूल्यांकन का उद्देश्य क्या होना चाहिए ? हमारी यह मान्यता है कि वर्तमान परीक्षाएं केवल बच्चों की बुद्धि के एक अंश का माप करती हैं। अत: इनका लाभ उन्हीं छात्रों को मिलता है जो भाषा, गणित और तर्क में प्रवीण होते हैं । साथ ही, जो छात्र इन परीक्षाओं का खेल और इनके दांवपेंचों को समझ गए हैं, वे उसी के अनुसार अपने पाठ को याद करके अच्छे अंक प्राप्त कर लेते हैं, परंतु क्या यह न्यायोचित है ?

आजकल मूल्यांकन का काम केवल विद्यार्थियों की कमजोरियों का पता लगाना है और हम उनका ध्यान केवल उनके दोषों की ओर खींचते हैं । मूल्यांकन का उद्देश्य, उनकी क्षमता का विकास करना होना चाहिए। हम उनकी शक्तियों पर प्रकाश डालें और उनका विकास करने का उन्हें मौका दें क्योंकि नई खोजों ने यह सिद्ध कर दिया है कि किसी भी प्रकार की बौद्धिक क्षमता का किसी भी आयु में विकास किया जा सकता है । हम जितना उस बुद्धि का प्रयोग करेंगे, वह उतनी ही बढ़ेगी।

अब मूल्यांकन के मापदंड बदल गए हैं । पहले अच्छा मूल्यांकन वह माना जाता था जो तकनीकी दृष्टि से सही हो, विश्वसनीय हो, वैध हो और जिसे अंकों से नापा जा सके । परंतु अब मापदंड बदल गए हैं। अब मूल्यांकन की उपयोगिता, उसकी व्यवहारिकता और उसके औचित्य पर अधिक ध्यान दिया जाता है । इसीलिए मूल्यांकन के सर्वव्यापी नियम नहीं बनाए जा सकते। मूल्यांकन के नियम परिस्थिति अनुकूल होने चाहिए । पहले सर्वव्यापी और मानकीकृत नियमों के स्थान पर अब लचीले और परिस्थिति अनुकूल मूल्यांकन की मांग है ।

परंतु ऐसा मूल्यांकन एक मुश्त नहीं किया जा सकता । यह तो सतत चलता रहना चाहिए । शिक्षक अपने विद्यार्थियों के सम्पर्क में रहता है । उसे चाहिए कि उनके हर कार्य कर नजर रखें, उनके काम करने के तरीकों का अवलोकन करें, उनकी रूचियों और प्रवृत्तियों का पता लगाए और उनकी कमजोरियों तथा शक्तियों को आंकें । इसके लिए वह प्रत्येक विद्यार्थी की प्रोफाइल रखे जिसमें उसके साल भर के काम का ब्यौरा रखा जाए, जिससे उस विद्यार्थी की प्रवृत्तियों का पता चले ।

केवल शिक्षक का अवलोकन ही पर्याप्त नहीं है । इसमें उसके माता-पिता को भी सहायता करनी चाहिए । वे भी अपने संतान की मूल्यांकन रिपोर्ट शिक्षक के पास भेंजे जिसमें वे अपने विचार लिखें कि उन्हें अपनी संतान में क्या प्रतिभाएं और क्या दोष नजर आते हैं । इससे शिक्षक को बहुत लाभ होगा।

आदर्श तो यह है कि स्वयं विद्यार्थी भी अपनी स्व-मूल्यांकन रिपोर्ट शिक्षक को दे । वह स्वयं अपनी प्रवृत्तियों का पता लगाएं, अपनी रूचि और पसंद से अपने शिक्षक को अवगत कराए जिससे उसके विकास में इन सब तथ्यों का ध्यान रखा जाए ।

परंतु इसके यह अर्थ नहीं है कि विद्यार्थियों की मानकीकृत परीक्षाएं बंद कर दी जाएं । वे परीक्षाएं अवश्य ली जाएं । चूंकि वे परीक्षाएं छात्र की योग्यता के सीमित पहलू का आंकलन करती हैं और उसी पर अधिक महत्व देती हैं, अत: उनके साथ-साथ विद्यार्थी के पूरे वर्ष का कार्य, उसके शिक्षक का मूल्यांकन, माता-पिता का मूल्यांकन और स्वयं छात्र का मूल्यांकन भी सम्मिलित किया जाए। हम इसे भी ध्यान में रखें कि रचनात्मक प्रतिभा की गणना अंकों में करना कठिन होता है। साथ ही रचनात्मक प्रश्नों का एक निश्चित

उत्तर नहीं होता है। अनेक उत्तर हो सकते हैं । किसी को सही उत्तर नहीं कहा जा सकता।

अब मूल्यांकन के मापदंड बदल गए हैं । पहले अच्छा मूल्यांकन वह माना जाता था जो तकनीकी दृष्टि से सही हो, विश्वसनीय हो, वैध हो और जिसे अंकों से नापा जा सके । परंतु अब मापदंड बदल गए हैं। अब मूल्यांकन की उपयोगिता, उसकी व्यवहारिकता और उसके औचित्य पर अधिक ध्यान दिया जाता है। इसीलिए मूल्यांकन के सर्वव्यापी नियम नहीं बनाए जा सकते । मूल्यांकन के नियम परिस्थिति अनुकूल होने चाहिए । पहले सर्वव्यापी और मानकीकृत नियमों के स्थान पर अब लचीले और परिस्थिति अनुकूल मूल्यांकन की मांग है । परिस्थिति में अनेक परिवर्तनीय तत्व होते हैं अत: उनमें बहुत संभावनाएं हो सकती हैं । आदर्श निर्णय तो वह होगा जो सभी संभावनाओं पर विचार करके जो उनमें सर्वोत्तम हो, वह निर्णय ले । परंतु यह असंभव हो जाएगा। अत: हमें कुछ प्रतिमानों का सहारा लेना पड़ता है । हमारा निर्णय सर्वोत्तम न होकर संतुष्टिदायक हो सकता है ।

मूल्यांकन करते समय हमें अपनी एक अन्य दुर्बलता के प्रति सर्तक रहना चाहिए। हम सभी अपनी परम्पराओं द्वारा प्रभावित होते हैं और नए विचारों के प्रति आशंकित रहते हैं । हम अपने विचारों को एक चौखटे में प्रतिबंधित कर लेते है और संसार को उसी चौखटे की दृष्टि से देखते हैं । वह हमारा नजरिया बन जाता है । हर युग का, हर संस्कृति का, एक सामान्य नजरिया होता है। जैसे प्राचीन समय में यह नजरिया था कि पृथ्वी चपटी है और सूर्य पृथ्वी के चारों ओर घूमता है। वास्तविक संसार की सभी घटनाओं को इसी चौखटे के द्वारा देखा जाता था । जो घटना इसमें फिट नहीं हो पाती थी उसे अनदेखा कर दिया जाता था। जब गेलिलियो ने कहा कि पृथ्वी गोल है और सूर्य के चारों ओर घूमती है तो इसका इतना विरोध हुआ कि गेलिलियो को जेल में बंद कर दिया गया । आज वह पुराना चौखटा तो त्याग दिया गया है परंतु एक नए चौखटे में हम लोगों ने अपने को सीमित कर रखा है ।

रचनात्मक दृष्टिकोण, परम्परागत विचारों से नहीं बंधता । नई परिस्थितियों के लिए नए समाधान चाहिए । जब हमें इस बात का बोध हो जाएगा कि किसी भी कार्य करने का एक ही तरीका नहीं होता, वरन् अनेक तरीके हो सकते हैं, तब हम रचनात्मकता को प्रोत्साहित कर सकेंगे । हम अन्य तरह से सोचना शुरू करेंगे । सोचना भी एक कार्य है जिसमें ऊर्जा व्यय होती है । आजकल हम अपनी संभावित बौद्धिक ऊर्जा का केवल 20 प्रतिशत व्यय करते हैं । हमारे छात्र में जितनी रचनात्मकता का विकास होगा, उतना ही देश प्रगति करेगा ।

मूल्यांकन एक कठिन कार्य है। तटस्थ व निष्पक्ष रहते हुए हमें विद्यार्थियों की शक्तियों से उन्हें अवगत कराना होगा जिससे उनकी प्रतिभाओं का अधिकाधिक विकास हो सके । शिक्षा का उद्देश्य परीक्षा पास करना नहीं है, वरन् आगे के जीवन में वास्तविक समस्याओं के हल ढूंढने की योग्यता प्राप्त करना है। शिक्षा द्वारा केवल सूचनाएं प्रदान नहीं की जाती क्योंकि सूचनाएं तो बदलती रहती हैं । शिक्षा द्वारा हम बच्चों को यह सिखाते हैं कि सूचना कैसे प्राप्त की जाए और सूचना प्राप्त होने पर उसका विश्लेषण और उपयोग कैसे किया जाए। ◆

मूल्यांकन का मूल्यांकन

. . . . . मुश्किल से ही कोई परीक्षा बालकों की योग्यताओं व उपलब्धियों का, इन शब्दों के सही अर्थों में ठीक-ठीक चित्र उपस्थित कर पाती है । परीक्षा केवल छात्र की स्मरण-शक्ति की ही जांच करती है, न कि इसकी शैक्षणिक उपलब्धियों की और सृजनात्मकता की । परीक्षा में छात्र की छोटी-छोटी असम्बद्ध सूचनाओं को रटने की शक्ति के अलावा और किसी भी योग्यता की जांच नहीं होती तथा यह असम्बद्ध सूचनाओं का समूह भी विद्यालय सत्र की समाप्ति के तुरन्त बाद दिमाग से साफ हो जाता है । फिर तथ्यों का एक नया समूह रटने के लिए दिया जाता है। साल दर साल यही होता रहता है और अन्त में बहुत ही कम तथ्य दिमाग में रह पाते हैं । इसकी सत्यता की जांच प्रथम वर्ष बी.ए. के किसी छात्र से दसवीं विज्ञान के कुछ प्रश्न पूछकर की जा सकती है ।

दूसरी बात, अधिकतर योग्य साक्षात्कारकर्ता इससे सहमत होंगे कि सैकण्डरी, पी.यू.सी. या बी.ए. पास होना कार्यक्षमता के संकेतक के रूप में बहुत ही कम उपयोगी होता है। इसका कारण भी यही है कि परीक्षा केवल रटने की योग्यता की जांच करती है तथा रटने की योग्यता किसी भी काम को समझदारी से कर सकने की योजनाओं में से एक नहीं है ।

तीसरी बात, परीक्षा निकृष्टतम अभिप्रेरण है, क्योंकि यह शीघ्र ही एक मात्र अभिप्रेरण बन जाती है । विद्यालयों में झांकने मात्र से इसका पता चल जाता है । देखिये अध्यापक व छात्रों की उन विषयों में कितनी रुचि है , जिनकी परीक्षा नहीं होती । उदाहरण के लिए दक्षिण भारतीय विद्यालयों में हिन्दी को ही ले लें। . . . . .

- डेविड ऑसबरॉ